संत नामदेवजी महाराज – जीवन वृतांत

अनुकृमणिका

क्रमांक	विवरण	पृष्ठ
1.	प्राक्कथन	2
2.	जन्म एवं परिवार	4
3.	गृहस्थ जीवन	7
4.	गुरू दीक्षा	13
5.	भक्तिमय तीर्थाटन एवं चमत्कार	21
5.1	विट्ठल भगवान की प्रतिमा को पय–पान करवाना	26
5.2	स्वान को घृतयुक्त भोजनार्पण	28
5.3	मन्दिर का द्वार परिवर्तित होना	29
5.4	गहरे कुएँ से जल प्रवाह	31
5.5	ब्राह्मणों को देवदर्शन	32
5.6	एक के बदले अनेक पारसमणियाँ	34
5.7	मृत गाय को जीवित करना	36
5.8	बदशाह का मान–मर्दन	38
5.9	राम नाम की महिमा	40
5.10	नामदेवजी की अग्नि परीक्षा	43
5.11	पत्थर का सोने में परिवर्तित होना	45
6.	म्हामहिम राष्ट्रपतिजी के उद्‌गार	47

1. प्राक्कथन

अखिल भारतीय नामदेव (छीपा) महासभा के वर्तमान अध्यक्ष, डा0 मोहनलालजी छीपा, सेवानिवृत कुलपति, स्वामी विवेकानन्द विश्वविद्यालय, अजमेर–राजस्थान एवं अटल बिहारी बाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल–मध्य प्रदेश, का विचार था कि संत शिरोमणी नामदेवजी महाराज के जीवन पर आवश्यक जानकारी उनके अनुयाइयों को सुलभ हो, इसके लिए उपलब्ध साहित्य का अध्ययन कर छोटी–छोटी पुस्तिकाएँ तैयार की जावें । इस सन्दर्भ में उन्होंने मुझे एक प्रारूप भी प्रेषित किया था। मैंने उनसे कुछ विचार–विमर्श किया किन्तु निर्णायक परिणाम नहीं निकल सका, परन्तु उनकी भावना ने मेरा मानसिक चिन्तन सक्रीय कर दिया और मैंने स्वयं निर्णय ले लिया कि मैं संत नामदेवजी के जीवन पर कुछ लिखने का प्रयास करूँ ।

फिर मैंने, जब मैं उपरोक्त महासभा द्वारा संचालित श्री विट्ठल नामदेव पत्रिका का प्रबन्ध सम्पादक था और उस समय संत नामदेवजी पर प्रकाशित जो साहित्य मेरे पास था, उसे पढ़ना प्रारम्भ किया, तब ज्ञात हुआ कि उनमें से किसी भी पुस्तक में, किसी भी विषय पर न पूर्ण जानकारी है और न ही क्रमबद्ध ।

इसके उपरान्त मैंने उक्त साहित्य में से ही उनके जन्म, परिवार, आध्यात्म यात्रा एवं भक्ति की शक्ति के चमत्कारों को क्रमबद्धरूप से पढ़ा एवं लिखना प्रारम्भ कर दिया और जो कुछ मूढ़ प्रयास मैं कर सका हूँ, वह आपकी जानकारी हेतु इस छोटी सी पुस्तिका के रूप में समर्पित कर रहा हूँ । इसमें किसी भी प्रकार की त्रुटि के लिए मैं

समस्त पाठकों से क्षमा प्रार्थी हूँ । यदि आप में से कोई भी इसमें सुधार करने के सुझाव देंगे तो मैं सहृदय कृतज्ञ आजीवन रहूँगा ।

दिनांक : 1 जनवरी 2021

ईश्वर लाल वर्ग सुपुत्र स्वर्गीय
श्री बिरधी लाल जी,

मूल निवासी केशवराय पाटन,
जिला – बून्दी – राजस्थान

वर्तमान निवासः ए–2/403,
महालक्ष्मी एनक्लेव, बारॉ रोड़,
कोटा–राजस्थान, 324001 ।

मोः 9461182577, 8302919940, 9462464577

संत नामदेवजी पर प्रकाशित साहित्य का विवरण जिसके आधार पर यह वृतान्त क्रमबद्ध कर लिखने का प्रयास किया गया है :

1. *राधा स्वामी संतसंग ब्यास की पुस्तक – संत नामदेव ।*
2. *अखिल भारतीय नामदेव टॉक क्षत्रिय महासभा द्वारा प्रकाशित "सन्त शिरोमणि श्रीनामदेव– जीवन और सन्देश"*
3. *नामदेव मिशन ट्रस्ट (रजिस्टर्ड), लोदी रोड, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित – सन्त नामदेवजी और उनके कुछ चमत्कार*

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

2. जन्म एवं परिवार

नामदेवजी के पूर्वज यदुसेठ रेलगॉव महाराष्ट्र के निवासी थे एवं मराठी परम्परा अनुसार उनका उपनाम रेलकर (रिलेकर) था । विट्ठल के अनन्य भक्त होने के कारण वे नरसी बामनी में आकर निवास करने लगे थे, जहॉ इनकी तीन–चार पीढ़ियों ने निवास किया ।

नामदेवजी के दादा का नाम हरिसेठ था । यह शिंपी जाती के थे और इनका पैत्रिक व्यवसाय कपड़े सिलाई एवं छपाई करना था । इसी कारण इस परिवार को शिंपी संज्ञा प्राप्त हुई थी। वृद्धावस्था के कारण जब उन्होंने स्वयं को पण्ढरपुर की वारी करने में असमर्थ पाया तो अपने पुत्र दामा सेठ को आदेश दिया कि वह पंढरपुर की वारी को भंग नही होने दे । दामा सेठ ने अपने पिता को इस बात का आश्वासन दिया, जिसके कुछ समय पश्चात् हरि सेठ का निधन हो गया, फिर दामा सेठ पंढरपुर में ही आकर निवास करने लगे ।

नामदेवजी के जन्म के सम्बन्ध में भी कुछ किंवन्दन्तियॉ हैं । एक वर्ग यह मानता है कि नामदेवजी दामासेठ और गौणाई को कही पड़े मिले थे । दूसरा वर्ग कहता है कि गौणाई को विट्ठल भगवान ने स्वप्न में बताया था कि चन्द्रभागा नदी में एक शींपी तैरती हुई दिखाई देगी जिसमें तुम्हें एक बालक मिलेगा । दूसरे दिन प्रातः दामासेठ और गौणाई चन्द्रभागा में स्नान करने गए तो उन्हें एक शींपी तैरती दिखाई दी जिसे वे घर ले आए और जब उसे खोला तो उसमें से एक बालक निकला। परन्तु नामदेवजी ने स्वयं स्वीकार किया है कि उनका जन्म स्वाभाविक रूप से ही हुआ है, जिसके लिए उनकी माता ने विट्ठल भगवान से मनौती की थी । नामदेवजी की दासी जनाबाई

ने भी यही मत स्वीकार किया है एव संत एकनाथजी ने भी यही उल्लेख किया है ।

नामदेवजी का जन्म कार्तिक शुक्ला एकादशी, रविवार 26 अक्तूबर 1270 के दिन, पिता दामा सेठ एवं माता गोनाई के घर नरसी बामनी गॉव, महाराष्ट्र में ऐसे भरे पूरे परिवार में हुआ था जो अपनी भगवत–भक्ति के लिए प्रसिद्ध था । इनका प्रारम्भिक नाम मूलशंकर था किन्तु विद्यालय में प्रवेश के समय नामदेव लिखवाया गया । नामदेवजी का जन्म गुरुनानक देवजी से 200 एवं कबीर दासजी से 130 वर्ष पूर्व हुआ था।

नरसी बामनी कौन सी थी ? सतारा जिले में स्थित काले नरसिंहपुर अथवा मराठवाड़ा के परभणी जिले में स्थित नरसी ब्राह्मणी ? यह प्रमाणित नहीं हो पाया, परन्तु अधिकांश लोग इसे परभणी जिले का छोटा सा गॉव नरसी बामणी ही मानते हैं । सटीक प्रमाण के अभाव में नामदेवजी के जन्म, जन्म दिन एवं स्थान आदि के सम्बन्ध में मत भिन्नता रही हैं, किन्तु अनेक शोधकर्ताओं के अध्ययन के उपरान्त उपरोक्त तिथि ही मान्य है ।

नामदेवजी के पिताश्री पण्डरपुर में विराजमान भगवान विट्ठल के परम भक्त थे । वे प्रतिदिन नियमित रूप से विट्ठल भगवान की मूर्ती के दर्शन करते, दूध का भोग लगाते एवं ध्यान करते थे । नामदेवजी की भी बचपन से ही धर्म में दृढ़ आस्था थी और वे प्रतिदिन अपने पिताश्री का यह सेवा क्रम बड़ी जिज्ञासा एवं उत्सुकता से देखते रहते थे। कहते हैं नः कि– "**पूत के पॉव पालने में ही दिख जाते हैं"** तद्नुरूप, बचपन से ही नामदेवजी की विट्ठल के प्रति लगन एवं अन्य अलौकिक क्रियाएँ थी ।

जब वे दौ वर्ष के थे तभी अपने मुॅह से विट्ठल नाद करने लगे और हाथ से ताली बजाकर आनन्द–विभोर हो जाते थे। विट्ठल नाम से उनका इतना तादातम्य हो गया था कि जब उनको विद्यालय में अध्ययन हेतु प्रविष्टि दिलाई गई और वे पढ़ने लिखने योग्य हुए तो वहॉ भी उन्होंने श्रीगणेशाय् नमः के स्थान पर विट्ठलाय् नमः ही लिखा। जैसे अभिमन्यु को मॉ के गर्भ में चक्रव्यूह–भेदन का ज्ञान हुआ एवं कर्ण, कवच एवं कुण्डल धारण किए हुए जन्मे, वैसे ही नामदेवजी की बाल–क्रियायें अद्‌भुत थी ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

3. गृहस्थ जीवन

नामदेवजी का विवाह राजाई के साथ हुआ और इनसे नारा, महादा, गोदा एवं विठा चार पुत्र तथा लिंबाई नामक एक पुत्री का जन्म हुआ। इनकी बहिन का नाम आऊबाई था । नारा का विवाह लाडाई, विठा का गोणाई, गोदा का विसाई और महादा का साखराई के साथ हुआ।

पारिवारिक तालिका

पिता दामासेठ माता गोणाई

नामदेव पत्नि राजाई आऊबाई (बहिन)

———————————————————

पुत्रः नारा विठा गोदा महावा पुत्री लिंबाई

पत्निः लाडाई गोडाई बिसाई साखराई

नामदेवजी जैसा पुत्र प्राप्त करके माता गोणाई की मनौती और दामा सेठ की अनन्य भक्ति फलदायी हो गई । नामदेवजी का विवाह भी हो गया, उन्हें पुत्र–पुत्री का सुख भी मिल गया, लेकिन नामदेवजी के माता–पिता कुछ और ही चाहते थे ।

पिताश्री ने नामदेवजी से कहा– तुम देखते हो– मैं वृद्ध हो गया हूँ और तुम्हें ही इस गृहस्थी का भार सम्हालना तथा परिवार का पालन–पोषण करना है । तत्काल माताश्री भी बोल उठी – मैंने तुम्हें नौ मास इसी आशा के साथ उदर में रखा था कि तुम हमें सुखी रखोगे । परन्तु नामदेवजी का संसार तो दूसरा जी बन रहा था । वे परिवार की परिधि को पार कर गए थे । इसलिए दामाजी एवं

गोणाईजी के कथन का उन पर किंचित भी प्रभाव नहीं हुआ। पाण्डुरंग ही नामदेवजी के आत्मीय बन गए थे और उनका स्मरण ही नामदेवजी का एक मात्र कार्य था ।

दामाजी को नामदेवजी की भक्ति इतनी व्यथित नहीं करती थी, किन्तु मॉ गोणाई को नाम्या का यह आचरण चिन्तित किए जा रहा था । इससे वे निराश नहीं हुई वरन् उन्होंने अनेक प्रकार से नामदेवजी को समझाने का प्रयास किया । यहॉ तक भी कहा– नाम्या, तू इस विट्ठला की अनुरक्ति छोड़ दे । तेरा यह देव, घर घाती है । इसने किसका भला किया है ? जिसके पीछे यह पड़ा जाता है, उसे संसार से विमुख कर, उसके हाथ में भिक्षा पात्र थमा देता है । अब बुद्धि से काम ले । देख ! तेरे लिये मैंने कितनी मनोतियॉ की थी, इस आशा से पाल–पोस कर बड़ा किया था कि बड़ा होने पर घर–गृहस्थी संभालेगा और वृद्धावस्था में हमें सुखी करेगा, परन्तु तू तो सब कर्म विपरीत ही कर रहा है। तेरी काया कितनी कोमल है, पर हृदय इतना कठोर जो मॉ की इस पीड़ा को समझ कर भी द्रवित नहीं हो रहा है ।

जब नामदेव जी पर इन बातों का किंचित भी प्रभाव नहीं हुआ तो माताजी अपनी व्यथा विट्ठल भगवान को सुनाने लगी । हे विट्ठल ! तू भी मेरे नाम्या जैसा ही कठोर हृदयी है । हम वृद्ध, सीलाई आदि करके अपना जीवन निर्वाह करते हैं । अनेक मनोतियों के उपरान्त तूने हमें पुत्र दिया, पर वह भी तुझे सहन नहीं हुआ ? सत्य ही तूने हमारे स्वर्णिम संसार को उजाड़ दिया है। हमारे जैसे अनाथों को उजाड़ कर तेरे हाथों क्या आयेगा ? अच्छा देवत्व दिखाया तूने ! हे प्रभो ! हम तेरी शरण हैं । हमारे जीवन–आधार नाम्या को हमें लौटा दे, अन्यथा तेरी इस ईंट पर ही मैं अपना सिर दे मारूॅगी । गौणाई की यह व्यथा, कथा बन कर ही रह गई । न विट्ठल द्रवित

हुए और न नामदेवजी; वह तो दिन प्रतिदिन इस मायिक संसार से विरक्त होते चले गये ।

ऐसे में गृहस्थी का सम्पूर्ण भार पत्नि राजाई के निर्बल कन्धों पर था, वह कब तक इसका वहन करती । बच्चों का पालन–पोषण एवं अतिथियों का आदर–सत्कार उसके लिए समस्या बन गया । जब वे अपनी बात नामदेवजी के सम्मुख रखती, तो वे विट्ठल की ओर आमुख होकर अपना दायित्व उन पर डाल देते ।

राजाई ने विचार किया माता रुक्मणी से प्रार्थना की जावे । माता गोणाई ने विट्ठल एवं पत्नि राजाई ने रुक्मणी जी का आश्रय लिया । राजाई, रुक्मणीजी के सम्मुख विनय करती हैं – हे मॉ ! आपके पतिदेव ने मेरे पति को इस प्रकार मोहित किया कि वे रात–दिन विट्ठल के ही नाम मे निमग्न हो, मानसिक रोगी की भॉति उनके साथियों के साथ इधर–उधर भ्रमण करते रहते हैं, न भोजन–पानी की चिन्ता है, न बच्चों के पालन–पोषण की । करताल बजाते, नाचते, गाते विट्ठल नाम की राग अलापते रहते हैं । इस ओर घर का विनाश, उस ओर उनका उल्लास । कब तक सहन करूँ ? आप अपने पतिदेव को समझाइये ! यदि यही स्थिति रही तो मैं अपने आपको चन्द्रभागा नदी में समाहित कर दूँगी ।

फिर एक दिन यही हुआ– राजाई अपने दो पुत्रों सहित चन्द्रभागा में कूद गई, परन्तु आश्चर्य कि किसि ने, उनको दोनों पुत्रों सहित नदी के तट पर लाकर खड़ा कर दिया । अपने कृत्य पर राजाई को बड़ा क्षोभ हुआ, परन्तु प्रतिक्रिया स्वरूप वे पुनः नदी में कूद गई, इस बार भी कोई उनकी बॉह पकड़कर नदी तट पर ले आया । कहा जाता है कि राजाई ने उस समय अपने सम्मुख विट्ठल को खड़ा देखा । वे उनके चरणों में गिर कर सुबक–सुबक कर रोने लगी । इसका

प्रभाव यह हुआ कि उनकी तीव्र वेदना शान्त हुई और वे अपने निवास पर लौट आई ।

एक समय राजाई को मार्ग में एक सर्प दिखाई दिया, उन्होंने उस सर्प को इस भावना से उठा लिया कि वह उन्हें काट लेगा और उसके विष के असर से उनके जीवन का अन्त हो जावेगा, किन्तु सर्प ने ऐसा कुछ नहीं किया, तो राजाई ने सर्प को घर लाकर एक मटके में बन्द कर दिया। नामदेवजी के आने पर जब मटका खोल कर दिखाया, तो उसमें सर्प के स्थान पर स्वर्ण मुद्राएँ भरी हुई थी । नामदेवजी ने राजाई से कहा– तुमने विट्ठल भगवान को क्यों कष्ट दिया। राजाई मौन हो गई, उन्हें विट्ठल की शक्ति का आभास हो गया और नामदेवजी के आदेशानुसार उन्होंने वे सारी स्वर्ण मुद्राएँ ब्राह्मणों में वितरित कर दी ।

माता गौणाई एवं पत्नि राजाई ने नामदेवजी को किसी व्यवसाय में लगाने के लिए पुनः प्रयास किया और नामदेवजी से कहा कि हमारी गृहस्थी का जीवन सुचारु चले इसके लिए तुम्हें ही कोई व्यवसाय करना है । तब नामदेवजी बोले मैं क्या व्यवसाय करूँ समझ नहीं आता, हमारे पास व्यवसाय करने के लिए रुपए भी तो नहीं हैं । माँ ने कहा, रुपयों का प्रबन्ध मैं करवा देती हूँ, परन्तु तुम ऐसा व्यवसाय करो जिसमें हानि नहीं हो ।

तब माताश्री ने गाँव के दादा साहुकार से कुछ रुपए उधार लाकर नामदेवजी को सम्हला दिए । नामदेवजी को समझ में नहीं आया कि इन रुपयों से वे कौनसा व्यवसाय करें जिसमें हानि नहीं हो । बहुत विचार करने के उपरान्त उन्हें अपनी भावना के अनुरूप एक ही व्यवसाय समझ आया कि वे निष्काम बृह्म–भोज का आयोजन करेंगे, किन्तु उसके लिए पण्ढरपुर उपयुक्त स्थान नहीं है ।

तब वे गोदावरी तट पर स्थित राक्षस–भवन तीर्थ के लिए प्रस्थान कर गए और मार्ग में उन्हें जितने भी ब्राह्मण मिले उनको वे उक्त स्थान एवं समय पर ब्रह्म–भोज में सम्मिलित होने का निमन्त्रण देते चले गये। जब दादा साहुकार को यह विदित हुआ तो वह भी अपने धन की हानि की चिन्ता के कारण राक्षस भवन पहुॅच गया ।

दादा के वहॉ पहुॅचने से पूर्व ही भोजन आदि तैयार हो चुका था, जीमण के लिए ब्राह्मणों की पंक्ति लग चुकि थी, भोजन परोसा जा रहा था ।

नामदेवजी ने जब दादा साहूकार को देखा तो वे विस्मित हुए किन्तु अचानक उन्हें ध्यान आया कि बृह्म–भोज के लिए रुपये तो दादा के ही लगे हैं, अतः उन्होंने दादा से निवेदन किया कि इस पुनीत कार्य में तुम्हारा ही धन लगा है, इसलिए तुम संकल्प लो और इन ब्राह्मणों को भोजन करने की अनुमति प्रदान करो । उस समय दादा कुछ कह न सका और संकल्प लेकर दादा ने ब्राह्मणों को भोजन करने की अनुमति प्रदान कर दी, लेकिन नामदेवजी से अपने रुपये वापस लौटाने के लिए कहना भी नहीं भूले ।

बृह्म–भोज के उपरान्त नामदेवजी ने दादा से निवेदन किया कि वे गोदावरी में स्नान कर स्वयं को पवित्र कर लें । दादा गोदावरी में उतरे, डुबकी लगाई और स्नान करके बाहर निकलने लगे तो उन्होंने देखा कि उनकी धोती के एक छोर में कुछ बंधा हुआ है। जब उसे खोला कर देखा तो दादा आश्चर्य चकित हो गये कि वह सोने का एक उपला था । अब दादा ने संतोष कर लिया कि यदि नामदेव उससे उधार लिए रुपये वापस नहीं लौटाये तो भी उसको उसके रुपयों से अधिक धन प्राप्त हो गया ।

इस घटना के पश्चात् नामदेवजी को व्यवसाय में लगाने के लिए कोई प्रभावशाली प्रयत्न नही किए गये ।

एक बार नामदेवजी की माताश्री रुग्ण हो गई तब चिकित्सक ने उन्हें अमुक पेड़ के छिलके का काढ़ा बना कर पिलाने के लिए कहा । नामदेवजी से उस पेड़ का छिलका लेकर आने के लिए कहा गया । पेड़ से छिलका निकालने के लिए जब उन्होंने उसके तने पर चाकू लगाया तो उस स्थान से पेड़ का रस निकलने लगा । नामदेवजी ने विचार किया कि पेड़ के घाव में से रक्तश्राव हो रहा है, तो उन्हें बड़ी दया आई और वे बिना छिलका लिये ही वापस घर लोट आये ।

यह नामदेवजी के मान्यता एवं दयालुता का प्रतीक है कि वे हर वस्तु में भगवान का निवास मानते थे और उन्हें किसी प्रकार से कष्ट पहुँचाना उचित नहीं है ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

4. गुरु दीक्षा

बचपन से ही नामदेव जी की रुचि धर्म की ओर थी जो उत्तरोत्तर बढ़ती ही चली जा रही थी । उन्हें विट्ठल के अतिरिक्त अन्य कुछ दिखाई नहीं देता था। वे भगवान के सहज पर अनन्य भक्त थे। उनकी भक्ति, भावना–परक थी न कि ज्ञान–परक । उन्हें अभी तक कोई सच्चा जीवित गुरु नहीं मिला था।

एक बार ज्ञानदेवजी भक्त मण्डली के साथ ज्ञान की चर्चा कर रहे थे तभी नामदेवजी भी वहॉ पहुॅच गए । नामदेवजी भक्तों में अग्रगणी थे किन्तु सब सन्त ज्ञान–चर्चा में मग्न थे, तो उनकी ओर किसी का ध्याान नहीं गया । नामदेवजी को यह अनुचित लगा परन्तु संत ज्ञानेश्वरजी ने नामदेवजी के इस भाव को जान लिया ।

ज्ञान–चर्चा के क्रम में उन्होंने संत गौरा कुम्हार से कहा कि इस ज्ञान–चर्चा में उपस्थित संतों में कोई कच्चा घट भी है, आप उनकी परीक्षा करके बताइये ! गौराजी ने कहा मैं किस प्रकार परीक्षा लूॅ । तब ज्ञानेदेवजी ने कहा कि आपके उपकरण थापी से। गौराजी ने एक एक करके सभी संतों को उस विधी से परखा, किन्तु किसी ने कुछ नहीं कहा।

जब नामदेवजी की बारी आई तब वे आवेश में बोले – यह भी कोई परीक्षा की विधी है ? यह सुन गौराजी ने घोषित कर दिया कि – भगवन् एक नामदेवजी ही कच्चे घट हैं । नामदेवजी यह सुनकर व्यथित हुए और तत्काल भागते हुए विट्ठल भगवान के पास पहुॅच कर कहने लगे– हे प्रभो ! मैं सदैव आप में अनुरक्त रहता हूॅ । आपने मेरी प्रार्थना पर पय–पान किया है, आप मुझसे वार्ता करते हैं, फिर भी

संत–मण्डली ने मुझे कच्चा–घट बताया, इससे मुझे मर्मान्तक पीड़ा हुई है, आप ही इसका निराकरण कीजिये, मैं आपकी शरण में हूँ ।

विट्ठल भगवान ने मन्द–मन्द मुस्कराते हुए उत्तर दिया– उनका कथन तो सत्य है । तूने मेरी भक्ति की, मुझे देखा भी, परन्तु मेरे स्वरूप को नहीं पहिचाना और यह पहिचान गुरु के बिना सम्भव नहीं है ।

नामदेवजी को विट्ठल की इस बात पर विस्मय हुआ और वे इससे असहमत होकर, हठ करके वहीं बैठ गए तथा कहने लगे– मैं तुम्हें पहिचानता हूँ तभी तो यह सब हो रहा है । भगवान ने उत्तर दिया– नामदेव तुम नहीं पहिचानते, यही तुम्हारा अज्ञान है । यह अज्ञान गुरु ही मिटा सकेगा । लेकिन नामदेवजी सन्तुष्ट नहीं हुए, तब विट्ठल बोले– कल प्रातः तुम चन्द्रभागा नदी के तट पर मुझे पहिचानना !

दूसरे दिन प्रातः नामदेवजी गौरा कुम्हार को साथ लेकर चन्द्रभागा नदी के तट पर जा बैठे और विट्ठल की प्रतीक्षा करने लगे । तभी एक फकीर, एक कुतिया के साथ उधर आया और उनके समीप बैठकर भिक्षा में मिली सूखी रोटियॉ निकाल कर प्याले में मसलने लगा और कुतिया का दूध निकाला तथा प्याले में डालकर वह रोटियॉ खाने लगा।

कुछ समय उपरान्त उस फकीर ने गौराजी से भी भोजन में साथ देने के लिए कहा तो गौराजी बिना हिचके उस पात्र में से रोटी का टुकड़ा उठाकर खाने लगे । फिर नामदेवजी से भी आग्रह किया तो उन्होंने उस प्याले में से रोटी खाने से मना कर दिया । गौराजी ने नामदेवजी का हाथ पकड़ कर रोटी खिलाने का प्रयास किया तो नामदेवजी वहॉ से भागकर पाण्डुरंग की शरण में पहुँच गए और कहा– हे भगवन् ! मैं चन्द्रभागा नदी के तट पर आपकी प्रतीक्षा

करते–करते थक गया, आप नहीं पधारे ? फिर वहॉ एक फकीर आ गया, उसने गौराजी को भृष्ट कर दिया । मुझे भी वह भ्रष्ट करना चाहता था, परन्तु मैं वहॉ से भाग आया । विट्ठल यह सुनकर हॅस पड़े और बोले– नामदेव, वह मैं ही तो था। गौराजी ने मुझे पहिचान लिया पर तुम असफल रहे । नामदेवजी यह सुनकर स्तब्ध रह गए और बोले– आप फकीर बनकर आए इस कारण नहीं पहिचान पाया । अगली बार ऐसा नहीं होगा । भगवान ने उत्तर दिया– ठीक है, पुनः कल मिलते हैं ।

तीसरे दिन नामदेवजी पुनः चन्द्रभागा नदी के तट पर प्रतीक्षा करने लगे । बहुत समय तक प्रतीक्षा के उपरान्त भी जब कोई नहीं आया तो नामदेवजी निराश हो गये। इतने में एक अफगानी व्यक्ति मूल्यवान वस्त्र पहिने, सुसज्जित घोड़े पर बैठा हुआ इन्हीं की ओर आता दिखाई दिया । नामदेवजी भयभीत हो समझे कि यह व्यक्ति बुरी नीयत से हमारी ओर आ रहा है, तो वे डरकर भाग गए । भागते हुए वे पीछे मुड़कर देखते जा रहे थे तब उन्हें दिखाई दिया कि वह घुड़सवार गौराजी के पास आकर खड़ा हो गया । नामदेवजी उसी प्रकार भागते हुए विट्ठल भगवान की शरण में पहुॅच गए और विट्ठल को यह वृतांत सुना दिया । सुनकर विट्ठल पुनः हॅस दिये और बोले– नामदेव तुम फिर से मुझे नहीं पहिचान पाये ? नामदेवजी ने साहस करके कहा– भगवान एक अवसर और ।

अगले दिवस पुनः नामदेवजी चन्द्रभागा नदी के तट पर चिन्तामग्न परन्तु सतर्क होकर बैठे हुए थे तभी उन्होंने देखा कि एक भिखारी एवं भिखारिन अपने तीन बच्चों के साथ भैंसे पर सामान रखकर चले आ रहे हैं और कुछ समय में ही वे नामदेवजी के समीप आ गये । नामदेवजी को उनके वेश से घृणा हुई और वे भिखारी से बोले– तनिक दूर हट कर बैठो । इस पर भिखारी बोले– हम थके हुए हैं,

कुछ देर विश्राम कर लें, भोजन की युक्ति करने के उपरान्त चले जावेंगे ।

फिर भिखारी ने अपनी पत्नि से कहा– बड़ी भूख लगी है, शीघ्र भोजन बनालो । पत्नि ने पूछा– सब्जी क्या बनाऊँ ? भिखारी बोला यह मुर्गियॉ हैं, पात्र में डाल दो । मुर्गियॉ पात्र में डालने के पश्चात पत्नि बोली– पात्र तो भरा ही नहीं, अब क्या डालूँ ? भिखारी ने कहा – यह मनुष्य पास बैठा हुआ है, इसे डाल दो, शीघ्रता करो, जोर से भूख लगी है । यह सुनते ही नामदेवजी वहॉ से भागे और विट्ठल के पास पहुँचकर अपनी व्यथा सुनाने लगे– भगवन् न जाने कौन था वह । राक्षस प्रतीत होता था, बड़ी कठिनाई से प्राण बचा कर आया हूँ, नही ंतो वह मुझे मारकर खा ही जाता । विट्ठल हॅसे और बोले– नहीं पहिचान पाये न, इस बार तो रुक्मणी भी साथ थी ।

नामदेवजी ने आश्चर्य से पूछा– भगवान आप यह सब कैसे कर पाते हैं । भगवान बोले– यही मेरी माया है और माया का विनाश केवल ज्ञान से ही होता है । ज्ञान गुरु की कृपा से ही प्राप्त होता है । भगवान फिर बोले– नामदेव तुम अब तक मेरे नाम के ही उपासक हो। मेरे अनेक रूप हैं, उनका ज्ञान भी आवश्यक है, जो केवल गुरु ही करवा सकता है । अतः तुम्हें गुरु की आवश्यकता है ।

नामदेवजी इन्हीं विचारों में मग्न हो गये कि गुरु कौन होगा, कहॉ मिलेगा, उसे कैसे जान सकूँगा कि यही वास्तव में गुरु होने योग्य है? ऐसे सोचते सोचते उन्हें निद्रा आगई तब उन्हें स्वप्न में एक वृद्ध दिखाई दिया जो शिवजी के लिंग पर पैर रख कर सो रहा था ।

अगले दिन जब वे मन्दिर में गये तब उन्हें वही दृश्य वहॉ प्रत्यक्षतः दिखाई दिया । मन्दिर में प्रवेश करते समय उन्होंने कोढ़ से ग्रसित एक वृद्ध को देखा जो शिवजी की प्रतिमा पर पैर रखे हुए लेटा हुआ

था । इस प्रकार शिवजी के अपमान को देखकर नामदेवजी को बड़ा आघात लगा और उन्होंने उन वृद्ध से अपना पैर शिव प्रतिमा से हटाने के लिए कहा । तब वे वृद्ध बोले कि वह इतना असमर्थ है कि अपना पैर स्वयं नहीं हटा सकता, अतः तुम ही मेरा पैर हटाकर उस स्थान पर रख दो जहॉ भगवान नहीं हों । जब नामदेवजी ने उन वृद्ध का पैर जिस ओर उठाकर रखा वहीं शिव–लिंग प्रकट हो गया, तब उन्हें ज्ञान हुआ कि भगवान तो हर स्थान पर विद्यमान हैं।

फिर नामदेवजी ने उन वृद्ध से उनका नाम पूछा तो उन्होंने अपना नाम विशोभा खेचर बताया । नामदेवजी ने उनके चरणों में सिर नवा कर प्रणाम किया और उनसे भगवत् प्राप्ति का पथ प्रदर्शित करने की याचना की ।

विशोभा जी ने नामदेवजी से पूछा तुम कौन हो और किस प्रयोजनार्थ आये हो ? नामदेवजी ने अपना नाम एवं अभिप्राय प्रकट किया, तब विशोभा खेचरजी ने नामदेवजी से कहा कि मैं स्वयं बैठ नहीं सकता अतः तुम मुझे उठा कर मन्दिर के बाहर ले चलो वहॉ बताता हूॅ । तब तक नामदेवजी के मन से उन कुष्ठग्रसित वृद्ध के प्रति सद्भावना जागृत हो चुकि थी । नामदेव जी ने विशोभाजी से कहा– आपका शरीर भारी होने के कारण वे उठाने में असमर्थ हैं, तो विशोभाजी ने योगबल से अपने शरीर को हल्का किया ।

जब नामदेवजी ने विशोभाजी को उठाया तो उनके कुष्ठों के दबने से उनमें से पीप बहने लगा जिससे नामदेवजी के हाथ सन गये लेकिन वे विशोभा जी को मन्दिर के बाहर ले आये और एक स्वच्छ शिला पर बैठा दिया । नामदेवजी को यह देख भारी विस्मय हुआ कि वे कुष्ठग्रसित वृद्ध तत्काल एक आकर्षक व्यतिववाले सुन्दर नवयुवक के रूप में परिवर्तित हो गये और नामदेवजी पर करुणा एवं प्रेम की वर्षा

करने लगे । कहा जाता है कि विट्ठल भगवान स्वयं, नामदेवजी के साथ विशोभा खेचर के यहॉ पहुँचे थे ।

इसके उपरान्त विशोभाजी ने नामदेवजी को भगवान के अस्तित्व, रहस्य और उस मार्ग पर अग्रेसित होने की प्रेरणा प्रदान दी । विशोभा खेचर की अनुकम्पा से नामदेवजी को भगवान के अस्तित्व का ज्ञान हुआ और उन्होंने विशोभाजी को ही अपना गुरु माना। इस प्रकार नामदेवजी की गुरु विशोभा खेचर से प्रथम भेंट नागनाथजी के मन्दिर में हुई ।

विशोभा (विठोबा) खेचर जी के सम्बन्ध में अधिक जानकारी नहीं है । विद्वानों का कहना है कि विशोभाजी के मतानुसार भगवान एक ही हैं जो सर्वत्र विद्यमान हैं और उसकी अनुभूति विशिष्ट आध्यात्मिक ज्ञानी के मार्गदर्शन से ही हो सकती है । वे न तो मूर्ती पूजा और न ही किसी प्रकार की बाहरी धार्मिक पूजा पद्दति के पक्षधर थे । उनका मत था कि भगवान समस्त प्राणियों के अन्दर विद्यमान है। यही मत उन्होंने नामदेव जी को सम्बोधित एक पद्य में वर्णित किया था । विशोभाजी ने कहा था कि तीर्थों और पवित्र स्थानों पर जाने से किसी के अज्ञान का अन्धकार दूर नहीं हो सकता। ध्यान समाधि एवं मनन से ही परमात्मा, सच्चे ज्ञान का मार्ग प्रसस्त करता है और हमारे अर्न्तमन में उसके दर्शन होते हैं । विशोभाजी ने कहा **"गुरु ही ज्ञान है"** । **अभंग 1359**

इस ज्ञान के उपरान्त नामदेवजी का व्यक्तित्व पूर्णतः परिवर्तित हो गया। उन्हे अब हर वस्तु एवं हर स्थान पर भगवान का ही स्वरूप दिखाई देने लगा और वे अध्यात्मिक कच्चे–घट के समान नहीं रहे थे। इसका उल्लेख उन्होंने अपने अभंगों में किया है कि "विशोभा खेचर द्वारा प्रेमसे उनके सिर पर रक्षाप्रद हाथ रखने के कारण ही वे

नामदेव–शरीर से विहीन हो, अविनाशी नामा हो गये हैं। विशोभा जी ने मुझे भगवत–प्रेम का नशा करवाया और उन्हे प्राप्ती की प्रेरणा प्रदान दी । मुझे स्वयं मे सब कुछ दिखाई देने लगा है । ऐसे गुरु के चरणों मे शत–शत नमन् ।

नामदेवजी पहले पण्डरपुर में विट्ठल की मूर्ती की सेवा पूजा करते थे। वे तीर्थस्थानों की यात्रा, पवित्र नदी–तालाबों में स्नान, वृत–उपवास एवं तत्कालीन प्रचलित धार्मिक रीति–रिवाजों की पालना करने में दृढ़ विश्वास करते थे, लेकिन जबसे उन्हें विशोभाजी से ज्ञान प्राप्त हुआ तबसे उन्होंने माना कि यह सब व्यर्थ हैं।

उन्होंने अपने अभंगों में लिखा कि–

"पत्थर से बना भगवान कभी बात नहीं कर सकता तो वह आपकी सांसारिक व्यथाओं का कैसे निवारण कर सकता है ? यदि पत्थर से बना भगवान मानव इच्छाओं की पूर्ती कर सकता है तो एक चोट मारने से वह कैसे टूट जाता है ? वे लिखते हैं कि समस्त छोटे–बड़े तीर्थस्थलों में पत्थर की मूर्तियॉ एवं जल विद्यमान है । जब मुझे अपने गुरु खेचर की कृपा से प्रेरणा प्राप्त हुई तब ज्ञात हुआ कि भगवान सर्वत्र व्याप्त है और वही भगवान नामा के अर्न्तमन मे भी निवास करता है" । अभंग 1369

इस प्रेरणा के पश्चात् नामदेवजी मन्दिरों एवं मूर्तियों के दर पर नहीं जाते थे । उनके लिए **"विट्ठल किसी प्रतिमा, अवतार या निजी भगवान का नाम नहीं रह गया था वरन् वह सर्व–व्याप्त परमात्मा हो गया था जो अकेला ही सबके अर्न्तमन में विराजमान था । " आदि ग्रंथ पृष्ठ 656**

मूर्ती पूजा, कर्मकाण्ड, जाति–पांति के विषय में इनके विचार द्रढ़ एवं स्पष्ट थे, इस कारण विद्वानों ने इन्हें कबीर आदि संतों का आध्यात्मिक अग्रज कहा है । नामदेवजी ने हिन्दी में पदावलियॉ और मराठी में अनेक अभंग लिखे हैं ।

मराठी वाङमय में संत नामदेवजी का नाम शिखरस्थ एवं भक्ति साहित्य में अग्रगण्य था । उनके गीत छोटे किन्तु लालित्यपूर्ण, सरल, भक्ति से परिपूर्ण एवं गूढ़ तत्वों से भरे हुए हैं । वे मधुर, स्पष्ट एवं सहजता से गाये जा सकते हैं । उनकी रचनाओं में बिट्ठल, बिठुला, श्रीरंग, राम, हरि आदि नाम एक समान हो गये थे जैसे गुरु नानक, कबीर, दादू, पल्तू आदि संतो की भगवान के प्रति मान्यता थी।

नामदेवजी के विषय में यह प्रामाणिक है कि वे निर्गुण और सगुण भक्ति एवं साधना के स्त्रोत हैं । उनके बाद ही सगुण एवं निर्गुण भक्ति पृथक–पृथक देखी गई है।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5. भक्तिमय तीर्थाटन एवं चमत्कार

नामदेवजी के जीवन काल में भारत देश पर अनेक आक्रान्ताओं का शासन था जिनमें यादव एवं मुगल शासक प्रमुख थे । भारतीय हिन्दू धर्म, संस्कृति एवं मूर्तीयों पर विशेषरूपसे मुगल शासन में आक्रमण हुआ।

उन्होंने मूर्तीयों का खण्डन ही नहीं किया वरन् हमारे रीति–नीति पर भी प्रहार किया । इस असम्यक व्यवस्था से सामान्य जनमानस अति–कुण्ठाग्रस्त था ।

नामदेवजी ने दिग्भ्रमित समाज को धर्म का वास्तविक स्वरूप एवं मानवीय भावना का महत्व समझाने और ऊॅच–नीच का भेद भुला कर समता की भावना जाग्रत करने के लिए, अपनी वाणी को स्वर एवं समाज को अपने आध्यात्मिक कर्मों के प्रति प्रगाढ़ लगन बनाए रखने की शिक्षा प्रदान की, जो उस युग में तो क्रान्तिकारी थी ही, आज भी उसका महत्व यथावत् है ।

यादव शासन में, अधिकांश शासकीय एवं धार्मिक शक्तियॉ ब्राह्मणों के हाथों में केन्द्रित थी, जिन्होंने अपना प्रभुत्व एवं श्रेष्ठता बनाये रखने के लिए धर्म, इसके पालन की विधि एवं उपयोगिता की व्याख्या सर्व समाज के ज्ञान, विकास एवं कल्याण के लिए प्रचारित नहीं की । उन्होंने धार्मिक भीरुता उत्पन्न करके सब कुछ अपने तक ही सीमित रखकर इन्हें अपनाते रहने का प्रचार किया ।

धार्मिक कर्म–काण्डों को करने की क्यों आवश्यकता है अथवा इनके करने से क्या हानि–लाभ होता है, इसकी वास्तविक जानकारी ब्राह्मणों ने नहीं दी जिसके अभाव में आज के शिक्षित समाज के अधिकांश

लोग इनको आडम्बर मान कर न तो इन पर विश्वास करते हैं न स्वयं अपनाते हैं न ही अन्य किसी को इन्हें अपनाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं ।

इस अनभिज्ञता के कारण धर्म के प्रति अरुचि बढ़ रही है और परिणाम स्वरूप व्यक्ति अनेक व्याधाओ से ग्रसित हो रहे हैं; जबकि यह धार्मिक कर्म–काण्ड भौतिकशास्त्र के सिद्धान्तों की भॉति सटीक परिणामों पर आधारित हैं । यदि विधि–विधान से इनकी क्रिया एवं प्रतिफल को स्पष्ट बताया जावें तो आज भी सर्वमान्य सिद्ध होंगे । मेरे मतानुसार इन धार्मिक कर्म–काण्डों के मूल सिद्धान्तों का अन्वेषण करके, जीवन में उनकी उपयोगिता क्यों है, समाज में उन्हें पुनः वस्तुतः समझाने की नितान्त आवश्यकता है ।

जैसा उपरोक्त वर्णन किया है कि नामदेवजी को बचपन से ही भगवान के प्रति अगाध श्रद्धा एवं विश्वास था एवं वे अपने पिताश्री को पूजन करते हुए बड़े ध्यान से देखते थे और मन ही मन वैसा करने का विचार करते थे ।

नामदेवजी की भक्ति सहज, निस्पृह, निर्लेप, एवं आडम्बर विहीन थी । वे जैसा देखते थे, वैसा ही मानते एवं करते थे। उनका विट्ठल के प्रति इतना अनुराग एवं विश्वास था कि वे उनको सदैव अपने सम्मुख ही देखते थे, उनसे वार्ता करते एवं अपनी बात मनवाने का हठ भी करते थे ।

विट्ठल एवं नामदेवजी में एकात्मता का भाव उत्पन्न हो गया था । वे विट्ठल को अपने शरीर में और स्वयं को विट्ठल के शरीर में विद्यमान मानते थे । इस भावना के दर्शन नामदेवजी के अनेक कृत्यों में परिलक्षित होते हैं, जिनमें से कुछ का वर्णन आगे किया जा रहा है ।

आर डी रानाडे ने नामदेवजी के लिए लिखा है कि नामदेवजी का भगवान के साथ ऐसा एकाकार हो गया था कि वे अपने आप में भगवान का एवं भगवान में स्वयं अपना वास (सोअहम्) मानने लगे थे।

उस काल में ज्ञानदेव जी एवं नामदेवजी परम भगवत् भक्त थे और एक दूसरे का पूर्ण आदर तथां सम्मान करते थे, किन्तु दोनों के विचार एवं कर्म पथ भिन्न भिन्न थे।

कहा जाता है कि ज्ञानदेवजी को स्वप्न में गंगा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों ने देशाटन करने की प्रेरणा दी । वे एक जागरूक सन्त की भॉति तत्कालीन राजनीति एवं धार्मिक स्थितियों का अध्ययन कर चुके थे और देश में गिरते हुए मानवीय मूल्यों एवं धर्म पर होने वाले कुठाराघात से समाज में हो रही विकृतियों से अति व्यथित एवं चिन्तित थे । वे नामदेवजी की भक्ति एवं चरित्र से विशेष प्रभावित थे और इन परिस्थितियों में समाज को जागृत करने के लिए ज्ञानदेवजी इस यात्रा में नामदेवजी को अपने साथ ले जाना चाहते थे । नामदेव जी इस यात्रा में ज्ञानदेवजी के साथ जाने के पक्षधर नहीं थे, किन्तु ज्ञानदेवजी के भावपूर्ण अनुनय–विनयवश वे, उनके साथ जाने को तैयार हो गये ।

उन दोनों ने गुजरात, राजस्थान, उत्तर प्रदेश एवं पंजाब की यात्रा की, जहॉ उन्होंने भगवत–भक्ति के ज्ञान का प्रचार–प्रसार और चमत्कार प्रदर्शित करके जन–मानस में धर्म के प्रति आस्था, श्रद्धा एवं विस्वास प्रस्थापित करने का प्रयास किया । इनके प्रयासों का इतना प्रभाव हुआ कि आज 750 वर्ष से अधिक व्यतीत हो जाने के उपरान्त भी इन

प्रान्तों के जन–मानस पर उनके कृत्यों का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है ।

इन यात्राओं में नामदेवजी एवं उस संत मण्डली ने स्थान स्थान पर भगवत् भक्ति के चमत्कार से ज्ञान और भक्ति की शक्ति का प्रसार किया एवं जन–मानस में इनके प्रति अनुरक्ति का भाव जागृत कर जात–पॉत तथा ऊॅच–नीच का भेद दूर करने का प्रयास किया ।

इसके अतिरिक्त उन्होंने अपनी भगवत्–भक्ति से अनेक चमत्कार करके तत्कालीन मुगलकाल शासकों द्वारा नष्ट एवं निर्मूल किए जा रहे धर्म को सुदृढ़ कर यह सिद्धान्त प्रस्थापित किया कि भगवत्–भक्ति में अपार शक्ति है, जिससे असम्भव भी सम्भव हो सकता है ।

इसके उपरान्त ज्ञानदेव जी ने घोषित किया कि उनका संसार में जन्म लेने का कार्य पूर्ण हो चुका है । कुछ समय पश्चात् ज्ञानदेवजी के दोनों भाई– सोपानदेव, निवृतिनाथ एवं उनकी बहिन मुक्ताबाई ने पच्चीस वर्ष की आयु के आस पास ही शरीर त्याग दिये । इससे नामदेवजी को अत्यधिक वेदना हुई ।

इसके पश्चात् नामदेवजी ने अपनी द्वितीय एवं अन्तिम यात्रा 27 वर्ष की आयु में उत्तरी भारत की अकेले ही की । उनकी इस यात्रा का उद्देश्य संतो के संदेश का स्थान स्थान पर प्रचार प्रसार करना था । इसके लिए वे निरन्तर पच्चास वर्षों तक बिहार, उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, गुजरात, काठियावाड़ एवं मध्य प्रदेश में पैदल चलते हुए अपने उद्धेश्य की पूर्ती का प्रयास करते रहे । आज भी इन सब प्रदेशों में श्रीनामदेव जी के अनुयायी विद्यमान हैं ।

इन यात्राओं का सटीक विवरण किसी एक ग्रंथ में समाहित नहीं है, किन्तु भिन्न भिन्न संतो एवं धर्मावलंबियों के भिन्न भिन्न कथानकों, पुस्तकों एवं उन प्रदेशों की लोकगाथाओं में इनका विवरण दृष्टिगत होता है ।

अन्त समय में नामदेवजी पंजाब के गुरदासपुर जिले में एक निर्जन स्थान पर निवास करने लगे तो शनैः–शनै उनके अनेक अनुयायी भी उनके पास आकर निवास करने लगे और एक छोटा सा गॉव बस गया । इस स्थान का नाम घुमान रखा गया जो पंजाब में एक प्रमुख स्थान है । नामदेवजी ने यहॉ अट्ठारह वर्ष व्यतीत किये । उनका देहावसान किस स्थान पर हुआ, इसके विषय में कोई सटीक प्रमाण नहीं हैं, किसी का मत है कि उन्होंने घुमान में देह त्यागी कोई कहते हैं कि पंढरपुर में ।

नामदेवजी की भक्ति के कुछ चमत्कार अग्रवर्णित हैं :

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.1 विट्ठल भगवान की प्रतिमा को पय–पान करवाना

एक बार नामदेवजी के पिताजी किसी कार्य हेतु गॉव से बाहर जा रहे थे तब उन्होंने नामदेवजी से, जो उस समय मात्र पॉच वर्ष की आयु के थे, कहा कि तुम प्रतिदिन विट्ठल भगवान को दूध का भोग लगाते रहना । नामदेवजी ने पिताश्री को सहमति दे दी ।

दूसरे दिन प्रातः पूजा करते हुए नामदेव जी ने विट्ठल भगवान के समक्ष एक प्याले में दूध रखा एवं उनसे दूध पीने की प्रार्थना की । कुछ समय पश्चात् नामदेव जी ने प्याले को देखा तो उसमें दूध उतना ही भरा हुआ था । अबोध बालक नामदेवजी ने विचार किया कि उनसे कोई त्रुटि हो गई है इस कारण विट्ठलजी दूध नहीं पी रहे हैं, तब उन्होंने अपनी किसी भी प्रकार की त्रुटि के लिए विट्ठलजी से क्षमा याचना करते हुए पुनः प्रार्थना की, हे भगवन् ! दूध पी लीजिये ।

बहुत समय उपरान्त नामदेवजी ने दूध के प्याले को पुनः देखा तो वह वैसा ही भरा हुआ था, तब उन्हें बहुत वेदना हुई और वे रोने लगे तथा बाल–हठ करके बैठ गये एवं प्रार्थना करने लगे कि विट्ठलजी जब तक आप दूध नहीं पीयेंगे तब तक मैं यहॉ से न तो उठूॅगा और न ही कुछ खान–पान करूॅगा ।

विट्ठलजी, नामदेवजी का सहज सच्चा हठ देखकर द्रवित हो गए और उन्होंने उस प्याले का दूध पी लिया तथा उन्हें दर्शन दिया । नामदेवजी प्रसन्न हो गए और अपनी मॉ से बोले– मॉ ! आज विट्ठल ने मुझे दर्शन दिए एवं नैवेद्य (पय–पान) गृहण किया । जब दामाजी वापस आये तो गौणाईजी ने उन्हे नामदेवजी का यह कृत्य सुनाया, जिस पर उन्हें विश्वास नहीं हुआ ।

दूसरे दिन नामदेवजी विट्ठल को भोग लगाने गये तो दामाजी भी उनके साथ चले गये । प्रति दिन की भॉति नामदेवजी ने विट्ठल को नैवेद्य गृहण करने की प्रार्थना की तो उन्होंने प्रकट होकर नैवेद्य गृहण कर लिया । दामाजी, विट्ठल को प्रकट होकर नैवद्य गृहण करते हुए देख कर गद्‌गद् हो गये और अपने को अहोभाग्य माना कि नामदेव जैसे विलक्षण पुत्र ने उनके घर जन्म लिया है । तबसे दामाजी ने नामदेवजी को असामान्य एवं अवतारी पुरुष माना एवं विट्ठल की सम्पूर्ण सेवा–पूजा का दायित्व उन्हें ही सोंप दिया ।

इस प्रकार नामदेवजी को भगवान के प्रति अपनी भक्ति एवं भगवान की उन पर कृपा का विश्वास होने लगा । जब नामदेवजी को यह विश्वास हो गया कि भगवान सबकी अर्न्तआत्मा में विद्यमान है तो वे सर्वत्र, सब जीवों के अन्दर एवं बाहर भी उसका ही स्वरूप देखने लगे ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.2 स्वान को घृत–युक्त भोजनापर्ण

एक बार जब वे भोजन बना रहे थे तब एक स्वान आया और उनके बनाये भोजन में से एक टिक्कड़ मूँह में दबाकर भाग गया । नामदेवजी ने उस स्वान में भी भगवान का ही रूप देखा तो वे एक प्याले में घी लेकर उसके पीछे पीछे यह कहते हुए दौड़े कि हे प्रभु ! बिना घी लगी टिक्कड़ मत खाइये इस पर थोड़ा सा घी लगाने दीजिये।

5.3 मन्दिर का द्वार परिवर्तित होना

पंढरपुर से यह संत मण्डली भूमि मार्ग द्वारा स्थान स्थान पर आनन्द एवं उल्लास प्रस्फुटित करती हुई ओण्ढ्या नागनाथ मन्दिर पहुॅची । मन्दिर में यह संत मण्डली भजन–कीर्तन में भाव–विभोर थी जिसमें अन्य अनेक उपासक सम्मिलित होकर भक्ति लाभ ले रहे थे । संकीर्तन करते हुए सम्पूर्ण रात्री व्यतीत हो गई ।

दूसरे दिन प्रातः मन्दिर के पुजारी और अन्य ब्राह्मण भक्त, भगवान नागनाथ का पूजन एवं अभिषेक करने आए तो देखा कि मन्दिर प्रांगण भक्तों से भरा हुआ है तथा गर्भ गृह तक पहुॅचने का मार्ग अवरुद्ध है । तब उन्होंने नामदेवजी से इस प्रकार मार्ग देने के लिए कहा कि हम, तुम लोगों को स्पर्श किए बिना, गर्भ–गृह तक पहुॅच जावें ।

नामदेवजी ने अत्यन्त शालीनता से निवेदन किया कि यह स्पृश्य–अस्पृश्य का भाव कैसा ? भगवान एक हैं एवं सर्वत्र सब में विद्यमान हैं । आप शान्ति से गर्भ–गृह में प्रवेश कीजिये ।

किन्तु उनमें से कुछ शिवोपासकों ने क्रोधित होते हुए कहा – तुम मन्दिर के पृष्ठ भाग में जाकर भजन–कीर्तन करो अन्यथा धक्के देकर निकाल दिए जाओगे । संत मण्डली ने विवाद करना अनुचित समझ मन्दिर के पृष्ठ–भाग में जाकर भजन–कीर्तन प्रारम्भ कर दिया । उनकी निश्छल, अनन्य एवं अटूट श्रद्धा भक्ति से प्रसन्न होकर, शिवजी ने उस मन्दिर का मुख्य प्रवेश द्वार उस संत मण्डली की ओर ही कर दिया । इससे अभिषेक करने वाले ब्राह्मणजन आश्चर्य चकित हो गए, उनको नामदेवजी की भक्ति का ज्ञान हो गया और जो ब्राह्मण

नामदेवजी के स्पर्श से बचना चाहते थे, उन्होंने ही उनके चरण पकड़कर क्षमा याचना की ।

इस प्रकार नामदेवजी की भक्ति के चमत्कार से उन ब्राह्मणों के मन से ऊँच–नीच, स्पृश्यता–अस्पृश्यता का अज्ञान दूर हुआ । आज भी इस मन्दिर का ही द्वार पश्चिम में है ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.4 गहरे कुएँ से जल–प्रवाह

ओंढ्या नागनाथ से यह संत मण्डली घृष्णेश्वर, कवेश्वर, शुक्लेश्वर, पंचवटी, त्रयम्बकेश्वर, द्वारका, डाकोर, जूनागढ़, चित्रकूट, काशी, प्रयाग होती हुई मारवाड़–राजस्थाऩ क्षेत्र के कोलायत गॉव पहुॅची जो अत्यधिक गर्म प्रदेश था ।

वहॉ एक ही कुऑ था जिसमें पानी बहुत गहराई में था। इतनी गहराई से पानी निकालने का उनके पास कोई साधन भी नहीं था, अतः ज्ञानदेवजी, जो योगी थे, ने अपने योग–बल से पक्षी का रूप धारण किया और कुएँ के पानी तक जाकर अपनी पिपासा शान्त की एवं वापस लौट आये ।

नामदेवजी भक्त थे, वे ऐसा नहीं करना चाहते थे। उन्होंने विचार किया कि भगवान की इच्छा यही है कि वे प्यास के कारण अपना प्राण त्याग दें तो उन्हें यह भी स्वीकार है । वे विट्ठल का स्मरण करते रहे । विट्ठल, नामदेवजी की अटूट भक्ति, श्रद्धा, विश्वास एवं हठ को जानते थे, अस्तु उनके चमत्कार से कुएँ में स्वतः इतना पानी भर गया कि पानी कुएँ से बाहर बहने लगा । तब नामदेवजी ने भगवान के चमत्कार को नमस्कार किया और पानी पीकर अपनी तृष्णा शान्त की।

यह प्रदर्शित करता है कि नामदेवजी की भक्ति में कितनी अलौकिक शक्ती थी, किन्तु वे इन शक्तियों का प्रयोग निजी हित में करने के पक्षधर नहीं थे।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.5 ब्राह्मणों को देव–दर्शन

यात्रा करते हुए संत मण्डली पैठण पहुॅची जो उस समय ज्ञान का केन्द्र होने के कारण दक्षिण की काशी के रूप में प्रसिद्ध थी । संत मण्डली ने नित्यकर्म से निवृत होकर गोदावरी तट पर संकीर्तन प्रारम्भ किया तो वहॉ के पंडितों ने उनका उपहास करना प्रारम्भ कर दिया, अपशब्द कहे और इस बात से ईर्ष्या प्रकट की कि कुछ उच्च वर्ण के व्यक्ति इनके चरण स्पर्श करके अपनी श्रद्धा–भक्ति प्रकट कर रहे हैं। इस दुर्भावना से उन्होंने निश्चय किया कि इस मण्डली को अपमानित करके पैठण से भगा देना चाहिए ।

अपनी योजनानुसार वे कट्टरपंथी, इस संत मण्डली में सम्मिलित होकर अव्यवहारिक प्रश्न करने लगे । नामदेवजी ने शान्तभाव से उन्हें अपना नाम, जाति, व्यवसाय, आराध्य–देव आदि बताये और कहा कि विट्ठल सर्व–व्यापक, सार्वभोम, सर्वज्ञ, अखण्ड, अनन्त, अन्तर्यामी एवं शुद्ध–बुद्ध है ।

वे कट्टरपंथी कहने लगे कि यह सब गुण तो हमारे देव में हैं । तुम अधम जाति के लोग भक्ति का ढोंग रचकर पाखण्ड कर रहे हो । यदि तुम्हारा विट्ठल इतना ही चमत्कारी है तो हमें उसके दर्शन करवाओ अन्यथा इस नगर को छोड़ कर चले जाओ ।

नामदेवजी को इन कट्टरपंथियों की संकीर्णता एवं अज्ञानता पर दुःख हुआ, इसलिए इनको सन्मार्ग दिखाने के लिए उन्होंने विट्ठल से प्रार्थना की, जिससे कुछ देवतुल्य व्यक्तियों ने वहॉ आकर संकीर्तन प्रारम्भ कर दिया, जिसे देख यह लोग अपने अज्ञान पर लज्जित हुए

और नामदेवजी की महानता को समझकर अपने दुर्व्यवहार के लिए उनसे क्षमा–याचना की तथा देव–मण्डली के दर्शन कर कतार्थ हुए ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.6 एक के बदले अनेक पारसमणियॉ

सामान्यतः यह दृष्टिगत होता है कि सच्चे सन्तों एवं भक्तों का अधिकांश समय भजन–पूजन में ही व्यतीत होता है । उनकी घर–गृहस्थी के संचालन में आवश्यक रुचि नहीं होती । नामदेवजी की भी यही स्थिती थी। परिवार के भरण–पोषण का भार उनकी पत्नि राजाई पर ही था, जो बड़ी कठिनाई से उसे वहन कर पाती थी।

नामदेवजी का एक पड़ोसी था परिसा भागवत । उसने अपनी पूजा–भक्ति से पारसमणि प्राप्त कर ली थी, जिससे वह अपने परिवार का भरण–पोषण निर्विघ्न कर रहा था । भागवत की पत्नि, राजाई (नामदेवजी की पत्नि) की पारिवारिक व्यथा से परिचित थी । एक दिन उसने अपनी पारसमणि राजाई को दे दी और कहा इसे तुम लोहे से स्पर्श कर, स्वर्ण बनाकर अपनी गृहस्थी की सामग्री क्रय कर सकती हो।

राजाई ने ऐसा ही किया और उस स्वर्ण को विक्रय करके वह गृहस्थी की समस्त आवश्यक सामग्री, बच्चों के लिए वस्त्र आदि क्रय कर लाई। उस दिन राजाई ने घर में अनेक स्वादिष्ट व्यंजन बनाये और जब नामदेवजी को परोसे तो वे बोले यह सब सामान कहॉ से आया? पत्नि ने कहा अब आप इसकी चिन्ता नहीं करें । नामदेवजी इस उत्तर से सन्तुष्ट नहीं हुए और राजाई से पूछा कि जब तक तुम सब कुछ सच–सच नहीं बताओगी, मैं भोजन नहीं करूॅगा । तब राजाई ने पारसमणि की सम्पूर्ण गाथा सुना दी । नामदेवजी ने राजाई से पारसमणि मॉगी और भोजन के उपरान्त उसे लेकर बाहर चले गए तथा नदी में फेंक दिया ।

रात्री को जब भागवत की पत्नि, राजाई से पारसमणि वापस लेने आई तो उसने नामदेवजी से कहा। नामदेवजी ने उत्तर दिया कि वे तो पारसमणि को नदी में फेंक आये । इससे भागवत की पत्नि अवाक रह गई । वह अपने पति को बुला लाई । भागवत ने नामदेवजी से पारसमणि लौटाने के लिए भला–बुरा कहना प्रारम्भ किया तब नामदेवजी ने भागवत से कहा कि पारसमणि चाहते हो तो मेरे साथ नदी पर चलो ।

नदी पर पहुँचते ही नामदेवजी नदी में उतर गए और डुबकी लगाकर बहुत से कंकर–पत्थर निकाल लाए तथा भागवत से कहा कि इनमें जो भी तुम्हारी पारसमणि है वह उठा लो । भागवत ने देखा तो वह आश्चर्यचकित हो गया कि नामदेवजी के हाथ में सारी पारसमणियॉ एक जैसी ही हैं । नामदेवजी, भागवत की ओर देखकर प्रसन्न हो रहे थे ।

भागवत, जो नामदेवजी को मात्र अधम जाति का मानता था, यह करिश्मा देख उन्हें विट्ठलरूप में मानने लगा और उसने तत्काल वे सारी पारसमणियॉ वापस नदी में फेंक दी एवं नामदेवजी के चरण पकड़ लिए तथा कहा कि अब मुझे तुम्हारे जैसी पारसमणि मिल गई है, अतः इनकी आवश्यकता ही नहीं है ।

इससे प्रमाणित होता है कि भगवत भक्ति से बड़ी कोई वस्तु नहीं है ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.7 मृत गाय को जीवित करना

नमदेवजी का आविर्भाव उस मुगल–शासन काल में हुआ था जब मुस्लिम आक्रान्ता हिन्दू मन्दिरों एवं देव प्रतिमाओं का विध्वंस कर रहे थे । नामदेवजी की भक्ति एवं उसकी शक्ति की महिमा महाराष्ट्र के बाहर भी देश के अनेक प्रान्तों में प्रसारित हो गई थी ।

दिल्ली में मुहम्मद तुगलक शासक था। उसे संतों एवं पुजारियों को मारने में विशेष आनन्द आता था । जब उसे नामदेवजी की भक्ति, चमत्कारों, सत्कर्मों, समाज में समता, सच्चरित्रता एवं हिन्दुओं में उनके भजन–कीर्तन आदि के प्रभाव के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त हुई तो उसने तत्काल अपने सैनिकों को नामदेवजी को पकड़ कर उनके सम्मुख लाने का आदेश दे दिया ।

सैनिक, नामदेवजी का पता लगाते हुए एक एक गॉव से उन्हें अर्धरात्री को उठा लाये । नामदेवजी निश्चिन्त हो अपने विट्ठल का नाम जपते हुए सैनिकों के साथ दिल्ली आ गए । यहॉ बादशाह ने उन्हें बन्धक बना लिया । दिल्ली में भी नामदेवजी की महिमा व्याप्त थी ही, अतः वहॉ के प्रमुख व्यक्तियों ने बादशाह से नामदेवजी को मुक्त कर देने का आग्रह किया।

बादशाह ने जब नामदेवजी को मुक्त करने के लिए इतना दबाव देखा तो वह भी नामदेवजी की प्रबल लोकप्रियता का देख स्तब्ध रह गया । उसने नामदेवजी को निर्जन स्थल पर भेज दिया और अपने सैनिकों को उन्हें अनेक प्रकार से यातनाएँ देने का आदेश दे दिया । इन यातनाओं का नामदेवजी पर कोई प्रभाव नहीं हुआ, वे शान्त–भाव से विट्ठल नाम स्मरण करते रहे ।

बादशाह को जब यह ज्ञात हुआ कि नामदेव में यातनाओं से कोई अन्तर नहीं आया है तब वह स्वयं गया और उनके सम्मुख एक गाय एवं उसके बछड़े का वध कर दिया । फिर नामदेवजी से कहा कि यदि तेरे विट्ठल में शक्ति है तो इन दोनों को जीवित कर दे, नही ंतो तुझे भी इन्हीं की भॉति मौत के घाट उतार दूँगा ।

इस आदेश से बादशाह की वहॉ सर्वत्र निन्दा होने लगी किन्तु कोई कुछ नहीं कर सका, तब नामदेवजी ने यथावत विट्ठल भजन–कीर्तन प्रारम्भ कर दिया । यह क्रम निरन्तर आठ दिन तक चलता रहा । आठवें दिन विट्ठल ने नामदेवजी को दर्शन दिए और उनके तेज से मृत गाय एवं बछड़ा जीवित हो उठे ।

आठ दिन तक प्रतिक्षा करते हुए बादशाह ने भी विचार किया कि नामदेव अब तक भूख–प्यास से मर गया होगा, परन्तु जब उसको यह समाचार ज्ञात हुए तो उसने स्वयं वहॉ जाकर यह चमत्कार देखा । वह भी नामदेवजी की भक्ति की शक्ति पर आश्चर्य चकित हो गया ।

परन्तु बादशाह इतने पर भी सन्तुष्ट नहीं हुआ । उसने नामदेवजी से कहा कि यह गाय जब जीवित थी तब दूध देती थी, अतः इसका दूध निकाल कर बताओ । विट्ठल की कृपा से नामदेवजी ने यह कार्य भी सम्पन्न किया, तब बादशाह नामदेवजी के सम्मुख नतमस्तक हुआ और उन्हें अनेक उपहार देकर विदा किया ।

इससे स्पष्ट होता है कि भगवान अपने सच्चे भक्त की हर परिस्थिति में किस प्रकार सहायता करते हैं ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.8 बादशाह का मान मर्दन

बादशाह ने जो वस्तुएँ नामदेवजी को उपहार स्वरूप भेंट की थी, वे सब उन्होंने यमुना में प्रवाहित कर दी और नाम संकीर्तन करते हुए अपनी यात्रा पर आगे चल दिये ।

किसी गुप्तचर ने नामदेवजी का यह कृत्य बढ़ा–चढ़ा कर बादशाह को सुना दिया और कहा कि आपके द्वारा नामदेवजी को दी गई उपहार की वस्तुएँ उन्होंने आपको अपमानित करने के लिए यमुना में प्रवाहित कर दी हैं । आप ऐसे दुष्ट को दण्डित करें ।

बादशाह प्रायः सुनि हुई बातों पर विस्वास कर लिया करते हैं, अतः उसने सैनिकों को भेज कर नामदेवजी को पुनः बुलवाया और उसके द्वारा उन्हें दी गई उपहार सामग्री वापस लौटाने को कहा, अन्यथा उन्हें प्राण दण्ड दिया जावेगा ।

नामदेवजी ने बड़े शान्तभाव से उत्तर दिया कि आपके द्वारा स्वेच्छा से दी गई उपहार सामग्री मेरी हो गई, उस पर मेरा अधिकार है, आपका नहीं; मैं उसका कैसे भी उपयोग करूँ !

बादशाह इससे सहमत नहीं हुआ और सारी वस्तुएँ शीघ्र वापस लौटाने की हठ कर ली । नामदेवजी यह सुन कर मुस्कराए एवं बोले– आपकी समस्त सामग्री इस शर्त पर मिलेगी कि आप मेरे साथ यमुना तट पर चलें !

बादशाह सहमत हो गया और दोनों यमुना तट पर पहुँचे । वहाँ नामदेवजी एकाग्रचित्त हो विट्ठल नाम संकीर्तन करने लगे। कुछ समय में बादशाह देखता हैं कि यमुनाजी, विपरीत दिशा में प्रवाहित होने लगी और अल्पावधि में ही बादशाह द्वारा नामदेवजी को दी गई

उपहार सामग्री, अन्य सामग्रियों सहित बहती हुई नदी के उस तट की ओर आ रही है जहॉ बादशाह खड़े थे। बादशाह ने सारी सामग्री इकट्ठी करवा ली । तब नामदेवजी बोले– बादशाह आप केवल वही सामग्री लें जो आपने मुझे दी थी, अन्य नहीं ।

इस चमत्कार से बादशाह अवाक रह गया और उसने नामदेवजी के चरण पकड़ लिए तथा अपने कृत्य के लिए क्षमा याचना की । नामदेवजी ने सहजता से उसे उठाकर कहा– मेरे चरण नहीं, विट्ठल के चरण गहने से तुम्हारा उद्धार होगा ।

इस प्रकार नामदेवजी ने मुस्लिम बादशाह को भी विट्ठल–भक्ति का उपदेश प्रदान कर सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा प्रदान दी ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.9 राम नाम की महिमा

एकं सद्विप्राः बहुधा वदन्ति– अर्थात परमात्मा एक है पर उसे अनेक नामों से पुकारते एवं पूजते हैं।

नामदेवजी विट्ठल नामधारी उपासक थे परन्तु वे जानते थे कि प्रभु की महिमानुसार उनके अनेक नाम हैं । इसी बात को उन्होंने एक चमत्कार द्वारा रामनाम की महिमा बता कर स्पष्ट कर दिया । जो महिमा विट्ठल नाम की है, वही महिमा राम नाम की है । अन्तर मात्र इतना है कि भक्त कितनी तल्लीनता, निष्ठा एवं भक्ति से नाम का जप करता है ।

पंढरपुर नगर के एक बहुत बड़े वस्त्र व्यवसायी को कुष्ठ रोग हो गया था। सब लोग, यहॉ तक उसके परिजन भी उससे दूर–दूर रहने लगे थे ।

कुष्ठ के उपचार हेतु पण्डितों ने सेठजी को परामर्श दिया कि वह नगर के साधु–सन्तों को उनकी इच्छानुसार तुला–दान करें । सेठजी ने तुलादान प्रारम्भ कर दिया । जिन जिन सन्तों का तुलादान हुआ उनकी सूची बनती गई । जब बड़ी संख्या में सन्तों का तुलादान हो गया, तब सेठजी ने अपनी भार्या से पूछा– प्रिये ! बताओ, सब सन्तों का तुलादान हो गया या नहीं ?

गुण एवं शीलवती भार्या ने कहा – नाथ ! इस नगर के सभी सन्त आ चुके, किन्तु विट्ठल की स्तुति में मग्न सन्त नामदेवजी का तुलादान नहीं हो सका, उन्हें इस कार्य में कोई रुचि नहीं है । आप ही उन्हें विशेषरूप से आमंत्रित कीजिये । यह सुन सेठजी ने अपने सेवकों को बुलाकर, सन्त नामदेवजी को विशेष अनुनय सहित अपने घर

आमंत्रित किया और उनसे स्वेच्छानुसार तुलादान लेने का आग्रह किया कि मुझ पर कृपा करें और कुष्ठ से मुक्ति दिलावें ।

सेठजी द्वारा बारम्बार निवेदन करने पर नामदेवजी ने प्रेम से कहा– **"मेरे पास विट्ठल की अमुल्य निधि है, अतः मुझे अन्य निधि की कोई इच्छा नहीं है" ।**

लेकिन सेठजी नहीं माने तब नामदेवजी ने वहीं ऑगन से एक तुलसी–पत्र तोड़ा, उस पर राम–नाम लिखा और सेठजी को देते हुए कहा कि आपका इतना ही आग्रह है तो इस तुलसी–पत्र के भार के बराबर तोलकर जो भी वस्तु आप मुझे देना चाहें, दे दीजिये ।

सेठजी को अपनी अपार सम्पत्ति पर गर्व था । उन्होंने मन–ही–मन विचार किया कि नामदेवजी को मेरी सम्पत्ति की जानकारी नहीं है और वे बोले – "महाराज आप मेरे सामर्थ्य के अनुसार मॉगिये, मैं बहुत कुछ दे सकता हूॅ ।" नामदेवजी मुस्कराये और बोले– सेठजी ! आप वैभवशाली हैं, किन्तु मेरी कोई इच्छा नहीं है, इसलिए आपके आग्रह पर मात्र इस तुलसीदल के बराबर तोलने के लिए कहा है, आप मेरी इतनी ही इच्छा पूरी कर दीजिये ।

सेठजी ने एक पलड़े में राम–नाम लिखित तुलसीदल रख दिया और दूसरे पलड़े में स्वर्ण मुद्राएॅ, पर तुलसीदलवाला पलड़ा उपर नहीं उठा। सेठजी स्वर्ण–आभूषण रखते रहे फिर भी तुलसीदलवाला पलड़ा उस स्थान से ऊॅचा नहीं हुआ । सारा नगर इस चमत्कार को देखकर स्तब्ध रह गया । सेठजीकी सारी सम्पत्ति तुलसीदल से भी हल्की निकली । सेठजी भी समझ गए कि नामदेवजी सन्त अवतार एवं विट्ठल के सच्चे भक्त हैं, अतः उन्होंने नामदेवजी के चरण पकड़ लिए ।

नामदेवजी ने सेठजी को उठाया और बोले– तुमने राम–नाम का महातम्य समझ लिया है, अब तुम्हारे कुष्ठ निवारण का समय आ गया है । फिर नामदेवजी ने विट्ठल नाम का मंत्र पढ़कर सेठजी का कुष्ठ दूर किया ।

इस क्रिया द्वारा नामदेवजी ने भगवत् नाम की शक्ति का प्रतिपादन किया है ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.10 नामदेवजी की अग्नि परीक्षा

हिन्दू समाज में एकादशी वृत का बहुत बड़ा महत्व है । नामदेवजी का जन्म भी एकादशी के दिन ही हुआ था । वे स्वयं भी एकादशी का वृत करते थे और अन्य व्यक्तियों को भी इस वृत को करने की प्रेरणा देते थे ।

एक बार नामदेवजी ने एकादशी का वृत रखा हुआ था और वे भगवत् कीर्तन में मग्न थे, तब एक वृद्ध ब्राह्मण उनके घर आया और भोजन की याचना करने लगा । नामदेवजी का नियम था कि एकादशी के दिन वे स्वयं तो वृत रखते ही थे, अन्य कोई उनके घर आता था तो उसको भी भोजन नहीं करवाते थे ।

अतः नामदेवजी ने उन ब्राह्मण देवता से निवेदन किया – ब्रह्मन् ! आज एकादशी के दिन वे आपको भोजन नहीं अर्पित कर सकते, आप दूध एवं फलों से तृप्ति कर लें ! कल द्वादशी को आपको पूर्ण सन्तुष्टि सहित भोजन अर्पित करने का प्रयास करेंगे । भोजन के अभाव में उन ब्राह्मण देव ने उनके द्वार पर ही प्राण त्याग दिए ।

दूसरे दिन द्वादशी को नामदेवजी द्वार पर ब्राह्मणदेव को देखने आए तो उन्हें अत्यधिक वेदना हुई कि उनका प्राणान्त हो चुका है । नामदेवजी ने उन ब्राह्मणदेव की मृत्यु का उत्तरदायी स्वयं को माना और प्रायश्चित स्वरूप उन ब्राह्मण की चिता में बैठकर भस्म हो जाने का निर्णय कर लिया एवं अपने भक्तों को भी यह जानकारी दे दी ।

नामदेवजी उन ब्राह्मणदेव का शव अपनी मण्डली के साथ चन्द्रभागा नदी के तट पर लाये, वहॉ चिता बनाई और उस शव को अपनी गोद में लेकर चिता पर बैठ गए तथा भक्तों ने विट्ठल का जय–घोष करते

हुए चिता में अग्नि प्रज्वलित कर दी । चिता के प्रज्वलित होते ही भक्तगण देखते हैं कि चिता में ब्राह्मणदेव का शव नहीं है, नामदेवजी ही विट्ठल की गोदी में बैठे हैं और विट्ठल मुस्करा रहे हैं । सब भक्तगण यह देख कर जय विट्ठल, जय जय विट्ठल की जयघोष करने लगे ।

यह ब्राह्मणदेव कोई सामान्य ब्राह्मण नहीं थे, साक्षात् विट्ठल भगवान ही थे जो नामदेवजी के प्रण की परीक्षा लेने आये थे, जिसमें नामदेवजी सफल हुए ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

5.11 पत्थर का सोने में परिवर्तन होना

नामदेवजी का पारिवारिक व्यवसाय वस्त्र–विक्रय करना था, लेकिन उनका मन इस कार्य में कभी नहीं लगा । वे सदैव विट्ठल नाम संकीर्तन में ही मग्न रहते थे ।

एक बार उनके पिताश्री के बहुत कहने पर वे वस्त्र लेकर दूसरे गॉव में लगी पैठ (बाजार) में विक्रय हेतु चले गए । उन्होंने विक्रय किए जाने वाले वस्त्रों की गठरी खोली और बैठ कर विट्ठल ध्यान में मग्न हो गए । उनके साथी व्यापारियों का सब माल बिक गया । सायंकाल जब घर लौटने का समय हो गया तब तक नामदेवजी के सारे वस्त्र वैसे ही रखे हुए थे और वे ध्यान–मग्न बैठे थे ।

पैठ बन्द होने पर नामदेवजी को अन्य व्यापारियों ने घर लौटने के लिए कहा तो वे विचार करने लगे कि पिताश्री पूछेंगे कि कितने मुल्य के वस्त्र विक्रय किए तो वे क्या उत्तर देंगे आदि आदि ?

वे, यह विचार करते हुए चल रहे थे तभी उनका ध्यान मार्ग में एक खेत पर गया जहॉ बहुत सारे पत्थर पड़े हुए थे जिन पर ओस छाई हुई थी । नामदेवजी ने उनकी गठरी के सारे वस्त्र उन पत्थरों को यह कहते हुए ओढ़ा दिए कि यह वस्त्र तुम्हें दिए और सात दिन पश्चात् आकर मैं इनका मुल्य ले जाऊॅगा ।

नामदेवजी ने घर पहुॅच कर पिताश्री से यही कह दिया कि वस्त्र बिक्री हो गए और उनका मुल्य सात दिन पश्चात् ले आऊॅगा । पिताश्री को सन्तोष हुआ कि पुत्र ने कुछ तो व्यवसाय किया ।

सात दिन पश्चात् पिताश्री अन्य पैठ में जाते हुए नामदेवजी से कह गए कि तुम गत सप्ताह विक्रय किए गए वस्त्रों का मुल्य लेकर आना।

नामदेवजी उस खेत पर गए और पत्थरों से उन वस्त्रों का मुल्य देने तथा उनके साथ घर चलने के लिए कहा । इतना कहकर नामदेव जी ने वहॉ से एक पत्थर उठा लिया और कपड़े में बॉध कर घर ले आए तथा माताश्री से कहा मैं वस्त्रों का मुल्य ले आया हूँ, इसे रख लो । इसके उपरान्त नामदेवजी विट्ठलजी के मन्दिर चले गये । माताजी ने भी बिना देखे उस पोटली को एक स्थान पर दिया ।

रात्री को जब दामा सेठ ने घर आकर पत्नि से पूछा कि नामा मुल्य लेकर आया या नहीं, तब पत्नि ने नामा द्वारा उनको दी गई कपड़े की पोटली दामाजी को पकड़ा दी । दामाजी ने उसे खोल कर देखा तो उसमें सोने का टुकड़ा निकला । माता–पिता दोनों उसे देखकर आश्चर्य करने लगे ।

यह बात आग की भॉति पूरे गॉव में फैल गई। खेत के मालिक ने भी यह बात सुनी तो वह वहॉ आ गया और कहने लगा यह पत्थर मेरे खेत से लाया गया है, अतः यह मेरा है, मुझे दो । दामाजी ने कहा कि तुम यह ले जाओ किन्तु हमारे वस्त्रों का मुल्य हमें दे दो । खेत मालिक ने वस्त्रों का मुल्य दे दिया और सोने के टुकड़े को लेकर घर चला गया । दामाजी को भी उनके वस्त्रों का मुल्य मिल गया और खेत मालिक को स्वर्ण।

यह नामदेव जी के निष्काम कर्म एवं निश्छल तथा अटूट श्रद्धा भक्ति का फल है ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

6. महामहिम राष्ट्रपतिजी के उद्‌गार

माननीय ग्यानी झैलसिंगजी, भूतपूर्व राष्ट्रपति, भारत सरकार द्वारा पूणे विश्वविद्यालय के विशेष पदवीदान समारोह एवं संत नामदेव अध्यासन के उद्‌घाटन समारोह के समय, विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों तथा वहॉ उपस्थित गणमान्य विद्वानों को सम्बोधित करते हुए भाषण की "भगत नामदेव विषयक चिंतन" पुस्तिका में संत शिरोमणी नामदेवजी के सम्बन्ध में बताई गई महत्वपूर्ण बातों में से कुछ अंश पाठकों की जानकारी हेतु यहॉ प्रस्तुत किए जा रहे हैं :

1. "एक बात जो मुझे यहॉ, इस ऐतिहासिक शहर में खींचकर लायी है, वह है भगत नामदेवजी का नाम । भगत नामदेवज के नाम का जो "संत नामदेव अध्यासन" यहॉ बना है उसमें मेरा भी थोड़ासा हिस्सा है । है तो बहुत मामूली, पर है जरूर । जब मैं भगत नामदेवजी के जन्म स्थान को देखने पंढरपुर में गया था तो मैंने वहॉ कहा था कि भगत नामदेवजी की कोई चेअर होनी चाहिए और वह प्रारम्भ कर दी गई है।"
2. "नामदेवजी के लिए मैं पहले आपसे यह कहूँगा कि पहले "भगत नामदेवजी" लिखो । संत नामदेवजी कहो । उनका आदर होना चाहिए । शुरुआत ही आदर से करनी पड़ती है । यह केवल किसी की इच्छा की बात नहीं है । यह तो करना ही चाहिए । उस जमाने में नामदेवजी ने खुद लिखा है– मेरे सामने संसार के सारे मनुष्य एक जैसे है ।"
3. नामदेव केवल मंदिर ही नहीं, मस्जिद भी मानते हैं । कहते हैं– मैं सबकी सेवा करता हूँ । ईश्वर सर्वत्र देखता रहता हूँ । परन्तु समदर्शी संत नामदेव के साथ उस समय कैसा व्यवहार किया

गया? मंदिर के पुजारियों ने ही मंदिर के बाहर जाने के लिए कह दिया, लेकिन उनकी भक्ति के वशीभूत हो भगवान ने मंदिर का मुँह ही उनकी ओर फेर दिया ।

4. संत नामदेव अध्यासन के कार्य में मेरी रुचि है । मैं इससे सम्बन्धित प्राध्यापकों से खुलकरर बात करना चाहता हूँ ।
5. हमारे महापुरुषों ने, राजनीतिक नेताओं ने, भक्तों ने, परोपकारियों ने, महान सेवकर्मियों ने, कुर्बानी करने वालों ने कहाँ से शिक्षा ग्रहण की थी ? मैं कहूँ, ऐसी प्रेरक शिक्षा सबसे पहले देने वाले नामदेवजी महाराज थे ।"

इस प्रकार अनेक प्रसंग बताये, लेकिन यहाँ मैंने इतने ही उदृत किए हैं ।

जय विट्ठल, विट्ठल, विट्ठल, विट्ठला

दिनांक : 28 जनवरी 2021 **ईश्वर लाल वर्ग**